"गुलकारियां"

"flowery images"

"My pen has scattered flowery images
in the atmosphere

Men and Gods will pick them up in
good cheer"

Akhgar

मुझ को मन्ज़िल की नहीं मेरा क़दम चलता रहे
वो करम चलता रहे और यह क़लम चलता रहे

हुस्न-ए-तख़ियोलात के जलवे बिखेर कर
साहरा को पुरबहार किये जा रहा हूँ मैं

अख़गर

In Memoriam

of

The Memorable

who

Upheld and Enhanced

The poetic grandeur

of

Bazm-i-Sukhan

Karnal.

Akhgar

गुलकारियां :

कुन्दन अख़गर शाहानी

स्टडो हाल, माडल टाऊन, करनाल।

कीमतें रूह की नहीं पड़तीं,
रूह तो रूह से ही तुलती है।

अव्वल तो अपने घर से निकलता नहीं .क़दम,
निकले तो फिर नक़ूश-ए-क़दम का नहीं शुमार।

अख़गर

Printed at : National Fine Art Press, Karnal. Phone : 2249

यादों की यादगारें

रायसाहिब प्रताप सिंह चौधरी बा-मज़ाक और बा-ऐहसास अदब परस्त हैं। उनको सिर्फ़ नुक्ता गो अदिबों से ही मुहब्बत नहीं बल्कि नुक्तासंज आहबाब से भी ख़ास उन्स है। वो मासूस करते हैं कि एक इशाअत उनकी याद में भी मंज़िर-ए-आम पर आये और उनकी यादगार बने क्योंकि करनाल के कुछ शायर और कुछ शेर शनास इन्सान वापिस जनत चले गये हैं। मैं उनमें से कुछ का कलाम और उनकी ज़िन्दगी के ताअसुरात पेश करता हूं। इससे उनकी शायराना और अदीबाना ज़ौक की अज़मत इस इशाअत 'गुलकारियां' की ज़ीनत बनेगी और यह मजमुआ उनके इसमा-ए-गरामी की अदबी यादगार में बदल देगा। एक नुक्ता वज़ाहत तलब है। हो सकता है कि कुछ हस्तियों को मैं इन्सानी निसयान के सबब छोड़ जाऊं। मेरी इस कोताही को किसी तरफ़दारी पर माहमूल न किया जाये। तवज्जो तलब हूँ।

मेरे ख्यालात को उन अहबाब की तारीख़ न समझा जाये। यह मेरे ख्यालात उनकी मजाल-ए सत और शख़्सियत पर मबनी हैं। हां उनके इन्तकाल फ़रमाने को मलहूज़-ए-ख़ातिर ज़रूर रखा गया है। समाअत फ़रमायें।

रायसाहिब रघुनाथ सहाय :—आप दयाल सिंह कालेज करनाल के बानी थे। अपनी इलमियत, फ़साहत, सहाफ़त ज़राफ़त और मतानत के दम से कालेज को चार चांद लगाने वाले थे। जू मैं उनसे मुलाकात के लिए आया और ज़ाहिर किया कि मैं दयाल सिंह कालेज लाहौर का तालब - इल्म हूं तो यह सुनकर उन

की तबीयत और नज़रें दरख्शां हो गई और मुस्सरत से बोले कि यह कालेज भी आप का है। इसको आप पर हक़ है और आपको इस पर। आप आज से ही इसमें शामिल हो गये। बाकी तनख़ाह की दुनियादारी मुझ पर छोड़ दें। पहले शेर सुनाइये। मैंने कहा आप तरन्नम पसन्द फ़रमाएंगे। या तहत-ऊल-लफ्ज़। कहने लगे जमज़मा पेराई मुझे मरगूब है। इरशाद।

मैंने अपनी ग़ज़ल का मतला तरन्नम से हाज़िर कर दिया तो जो आठ दस प्रफेसर Interview के लिये आए थे और दफ्तर के असाहब भी मजलिस में शामिल हो गए। इस वक्त मतला ही हाज़िर है।

ज़रा ज़रा दशत का अब मायल-ए-परवाज़ है
अल्लाह अल्लाह मेरे नग़मे का अभी आग़ाज़ है

राय साहब मोसूफ़ ने जी भर कर दाद दी और कई बार सुना। काश मैं तरन्नम शै कर सकता। उन्होंने कालेज को पुर तरन्नुम, पुरतक्कलुम और पुर तबस्सुम बनाना मुझ पर छोड़ दिया। मुझे वापिस नहीं जाने दिया कहीं मैं वापिस न आऊं। उन्होंने सर चन्दु लाल त्रिवेदी गवर्नर पंजाब और जनाब चांद नारायण रैना डिप्टी कमीशनर को कालेज में मद्दाऊ किया और पहले ही साल यूनिवर्सिटी में हाकी, फुटबाल और क्रिकेट की टीमें शामिल करा दीं। देहात सुधार का सिलसिला भी चला दिया वो आये दिन कालेज में शायराना मजलिस चाहते थे। शेर सुनते थे। अच्छे शेर को पसन्द फ़रमाते थे और कालेज की अदबी तरक़्की का ज़ामिन मुझे बना दिया। मैंने भी लाहौर का हक़ करनाल को अदा कर दिया। राय साहब खुद जल्द जनत लौट लिये। उनका ज़ौक़ अब तक जिन्दा है।

राय साहब जोगी दास एडवोकेट :-आप सर-ज़ामीन-ए करनाल के माया-ए-

नाज फ़रज़न्द थे। शहइस्तगी और सुस्तगी उनकी फ़ितरत में घुली हुई थी। माहिर-ए-कानून थे और करनाल बार के सदर भी रहे। जब कालेज खुला और मैंने तोलोवा के साथ मिलकर तकसीम की मारी जिन्दगी को दोबारा बेदार करना चाहा तो यह बताया गया कि मोसूम से मिलना बहुत ही कष्ट आमद साबित होगा। हम उनसे उनकी जा-ए-सकूनत पर मिले। वो मुताहमल मिजाज़ और मुतवाज़िन तबीयत इन्सान थे। मेहमान नवाज और साथ-२ अदब और अदीब नवाज़ शख्सियत के मालिक थे। मुझसे और तोलोबा से मिल कर बहुत खुश हुए और हमारा मकसद जानकर तो चमक उठे और हर मुमकिन इमदाद और ता-आवन का वादा फ़रमाया। फिर ग़ज़ल की फ़रमाइश की। वो अपने लड़के से मेरी ग़ज़ल और तरन्नुम के बारे में सुन चुके थे। ग़ज़ल बा तरन्नुम का इसरार किया। मौजूम दाद दी और उनकी शायराना तबियत का अज़ीम सबूत हमारे सामने उतर आया। ग़ज़ल के मक्ता पर तो उनकी कैफ़ियत मजलिस पर छा ही गई। मैंने तरन्नुम भरी आवाज़ में पढ़ा था—

यह कैसा है मुकाम आया कि अख़गर आज तो मैंने
हजूम-ए-शौक से चूमा है संग-ए-आसतां अपना

राय साहब शेर-ओ-.सकून के तलबगार थे। उनसे मिलकर और उनको शेर सुनाकर मज़ीद लिखने का शौला भड़कता था।

हज़रत-ए-नसीम - जनाब पन्ना लाल चोपड़ा पुलिस सर्विस में D.S.P. के मरतवा तक पहुंचे और कमाल अहलियत से ओदेह को सम्भाला। मुल्की कानून से सबब वाकफ़ियत थी। करनाल बार के मैंबर हुए। देखने में जसीम, शेर कहने में नसीम और तबीयत में नफीस इन्सान थे। उनका और मेरा एक गहरा सिलसिला चल पड़ा। शेर-ओ-.सखुन ही इसकी बुनियाद थी। बदमे-ए-.सखुन करनाल के नसीम साहिब बरसों सदर रहे। हर माह राय

साहिब प्रताप सिंह की सरसरस्ती में एक मुशायरा होता। नसीम साहिब का कलाम ज़ीनत-ए-अंजमन हुआ करता। सालाना मुशायरा में हिन्दुस्तान के महशूर शोरा हिस्सा लेते। नसीम साहब कुर्सी-ए-सदारत की इज्ज़त बख्शते और मुझे मीर-ए-मुशायरा का फर्ज सौंपते। यह मुशायरे नसीम साहिब की बदौल आज तक करनाल की यादगार है इन तक्लुफ़ात के इलावा हम दोनों अक्सर मिलते। मुलाक़ात की बुनियाद शेर-ओ-शायरी होती। बतौर एडवोकेट उनका मकाम बलन्द था और बहशियत-शायर उनसे कहीं बलन्द। आईना-ए-दिल उनकी ज़िन्दा यादगार है और उनके शायराना कलम का एजाज है। मैं उनके चन्द शेर आपकी नज़र करता हूँ।

क़तआत

खुदा जाने मुझे क्या हो गया है
मुक़द्दर ले के करवट सो गया है
यह मुस्तक़ाबिल के या माजी के किस्से
इन्ही में हाल मेरा खो गया है

दिल की दुनिया लुटा के देखूंगा
उनको अपना बना के देखूंगा
कैफ़ परवुर हयात के लमहें
हर मुसीबत उठा के देखूंगा

अब ग़ज़लियात के चन्द शेर—

मैंने क्या चाहा था ऐ दिल तूने
मुझको .खुद मेरी निगाहों में ही रुसवा कर दिया

ज़िन्दगी और ज़िन्दगी के बाद फिर से ज़िन्दगी
मौत ने ही जिन्दगी का राज़ अफ़शा कर दिया

कभी देखी भी है पीर-ए-मुग़ाने
जवानी और फिर उनकी जवानी
मचल उठे हैं उन आंखों में आँसू
करेंगे मेरे ग़म की तर्जमानी

है पीर-ए-फ़लक भी गर्दिश में और गर्दिश में पैमाना भी
मन्हूस सितारे डूबेंगें तक़दीर का तारा चमकेगा

बात करने से तो आरी था नसीम ए-बेनवा
अजंमन वालों ने क्यों उसको ग़ज़ल खां कर दिया

जलवा-ए-कलाम के बाद यह भी कह दूं कि उनकी अंग्रेजी कहानियां भी किसी वक्त छप सकती हैं।

मलिक तेजभान साहिब एडवोकेट — जो इन्सान शायर या उससे बढ़ कर शेर-ओ-सखुन शनास होता है वो एक खास ताहज़ीब और आदाब-ए-ज़िन्दगी का मालिक होता है। मलिक साहब शायर न सही मगर शेर शनास और नुक्ता संज मिजाज़ तबीयत के मालिक थे। उनसे मिलना शरीनी और शाईसतगी से दो चार होना था। शेर-ओ-सखुन का मुतालिया वसीह था और बेशुमार शेर याद थे जिनका वो बर महल इस्तेमाल फरमाते थे जो बज़ात-ए-.खुद दाद तलब होता था। फिर घर पर वेद मुक़द्स का मुतालिया भी जारी रहता था जो गु.फ्तगू को चार चांद लगा देता था। मलिक साहब एक मुस्तनद कानून दान थे। करनाल बार के सदर भी रह चुके थे। तबीयत सादा और अज़ीम थी। मेरा उनका सिलसिला शेर-ओ-शायरी पर मबनी था। मेरा कलाम

सुनते थे और बहुत पसन्द फ़रमाते थे। मैं हर साल दशहरा की शाम उनकी मजाल सत में बिताता था। जलेबी की जिआफत के बाद कलाम-ए-ग़ैबी की दावत होतीं थी जो एक वजदानी कैफ़ियत तख़लीक़ कर देती थी। उन की जनत की वापसी शयराना मजलिस में खला पैदा कर गई है।

सरदार तेजा सिंह एडवोकेट— जहां उनकी वकालत का दर्जा बलन्द था वहां उनका शायराना इशतियाक अजीम था। वो बजम-ए-सख़ुन करनाल के अजलास में शौक से आते और हसब-ए-जरूरत हिस्सा भी लेते। शेर सुनना सुनाना उनकी फितरत में था। कई बार रोटरी कलब में उन्होंने मुझे अपना कलाम पढ़ने की दावत दी। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि उन्होंने दूसरे मेम्बरां में भी इस शौक को कायम रखा हुआ है। मुख़्तलिफ शोरा तजकरा करते और उनके शेर भी सुनाते थे। मुशायरों का शौक उनको क़ुदरती था। अपना कारोबार छोड़ कर मुशराया सुनते थे।

जनाब ए-अविनाश चन्द मितल एडवोकेट—मादर-ए-करनाल के फरजंद-ए अर्जमंद जनाब-ए-अविनाश चन्द एडवोकेट अपने काम में दस्तरस रखते हुए अदबो और शायराना ज़ौक में भी अपनी मिशाल आप थे इसी सबब हम एक दूसरे के बहुत जल्द करीब आ गये। ख़ुद कहते थे और शौक से दूसरों का कलाम पढते और सुनते थे। बलन्द पाया शौरा से उनकी क़ुरबत हासिल थी। शेर सुनना उनको बेहद मस्सरत देता था। मैंने जब अपना पहला मजमुआ 'गुस्ताख़ियां' उनकी नजर किया तो बेहद खुश हुए। कई अशआर अपने इन्तख़ाब में शामिल कर लिये और दो दिन में जो राय कायम की वो आज तक मुझे याद है। फरमाने लगे आपके कलाम की ज़ुबान पेशावर से पटना तक की ज़ुबान बनेगी। आपके कलाम में खुदा परस्ती, खुद परस्ती का एक तूफान उठा हुआ है। मय परस्ती की झलक और झोंका भी आ गुज़रते हैं। मजमुए का बसहफ यही होता है कि शायर की शख़्सियत नाज़रीन को गरदाब में ड़ाल

दे। मेरे कलाम में भी आपके कलाम की तरह जाती तजरबात भरे हुए हैं।

जब उनसे मुलाक़ात होती तो मुक़द्दमे के लिफ़ाफे एक तरफ मेज़ पर छोड़ देते और कहते कि आप दरमागदी में जिन्दगी लाये हैं। अब तो तबीयत सुनने-सुनाने पर मुस्ताईद हो गई है। यह पता न लगता था कि वक्त थम गया है या उड़ा जा रहा है। एक मुशआरा का आलम और हंगामा बपा हो जाता था। उनका बयाज़ मैंने देखा था। उनके पिस्सर-ए-सईद अख्तर बाबू सुरेश मितल एडवोकेट से मैंने तलब किया है ताकि उनके कलाम-ए-दरख्शा पेश कर सकूं। बयाज दस्त व दस्त घूम रहा है देखें कब दस्ततिआब हो और मैं उनके कलाम से आपको मुस्तफीद कर सकूं। मुन्ताजिर बैठा हूं।

कलाम-ए-अविनाश चन्द फ़ारिग तलमीज प्रोफ़ेसर वहीद-ऊद-दीन सलीम पानीपती

1 खुशनुमा दुनियां में वो हाजत रवा मीनार हैं
रोशनी से जिनकी मल्लाहों के बेड़े पार हैं

2 ग़ैर काहे को सुनेंगे तेरा दुःखड़ा फ़ारिग़
इनको फुरसत है कहां अपनी ग़ज़ल गाने से

3 तुम किसी के भी हो नहीं सकते
हम ने अपना बना के देख लिया

4 तुम तो आज़ाद हो तुम क्यों न बड़ो चंद कदम
हम तो हर हाल में पाबन्द-ए-सलासिल ठहरे

5 मायूस-ए- आरज़ु से न कहना पैय्याम-ए-वस्ल
दम ही निकल न जाये कहीं इस ख़बर के बाद

6 देखी न होगी ऐसी अदा आईना तो लो
तस्वीर बन गये हो हमारी नज़र के बाद

7 सींचा है अपने खून से हम ने भी गुलस्तां
तेरा ही हक़ बहार पर ऐ बाग बां नहीं

मेजर सुन्दर सिंह लाठर —आप अदबी ज़ौक़ के एक और इन्सान थे जो ग़ालिबन शायराना कलाम बगैर नहीं रह सकते थे। उनका मज़ाक इतना बलन्द था कि लगभग हर इक अच्छे शायर का मजमूआ उनकी ज़ाती लाईबरेरी में मौजूद था। जब कभी बस या गाड़ी का सफ़र करते तो कोई न कोई दिवान ही पढ़ते रहते। अगर बुक स्टाल से खरीदना भी पड़ता तो गुरेज़ न करते। शायराना रोहजान हमारी .कुरबत का बाहिस बना। गली और बाज़ार में भी मिलते तो चंद लमहात का शयराना लेन देन हो जाता। .खुद नहीं लिखते थे। मगर अच्छे शेर की अज़मत खूब पहचानते थे। उनका समाअत का अपना मक़ाम था ?

प्रिंसीपल सन्तराम गरोवर :— मुल्क की तकसीम के बाद आप लाहौर का मुकम्मल अदबी और शायराना मज़ाक लेकर करनाल तशरीफ़ लाये। आप दयालसिंह कालेज लाहौर में अंग्रेजी के प्रोफेसर थे। अदब से तो उनका कुदरती रबत था। लाहौर उर्दू शायरी का मरकज़ था। गरोवर साहिब भी इस रंग में रंगे हुए थे। जब दयाल सिंह कालेज करनाल के प्रिंसीपल मुकर्र हुए तो मैंने उनके शायराना जौक़ को और भी भड़काया। वो मुशाय्यरों के दिलदादा थे। सरकदा शायरों को दावत देते थे। और उनकी क़दर करते थे। कालेज Administration में उनका मुकाबला न था। शहर में हर महाज़ पर उनका अपना मक़ाम था उनके दम से करनाल क्लब में भी कोई न कोई मुशायरा होता

रहता था। उनका लिबास उनकी शख्सियत और उनकी अदींबाना तबीयत की मिसाल ना ही ढूंढी जाय तो अच्छा है यह न मुम्कनात में है।

जियालाल कपूर :—जो हीरों की माला में पिरो रहा हूँ आप भी उसी माला के हीरे हैं। इसमें कोई शक नहीं कि करनाल इल्म-ओ-अदब का मजबूत मरकज़ है लेकिन जनाब आप ने भी तबाअत और इशाअत से इस मरकज़ को और मजबूत किया है। करनाल के हर स्कूल, कालेज और लाईबरेरी में हर मज़बून की नायाब कुतुब मुहय्या की है। सबसे बड़ा वस्फब जो मैंने उनमे देखा है वो शेर-ओ-शायरी का शौक है जो उनमें हमेशा मौजज़न रहता था। वो बज़्म-ए-स.खुन करनाल केसिर्फ रूकन ही नहीं थे बल्कि शोरा से मिलना जुलना मौज़ूं दाद देना उनकी तबीयत में हाज़िर था। बार हा ! उन्होंने अच्छे शोरा को जाती दावत देकर बज्म-ए-स.खुन की खिदमत की। वो स.खुन गो तो न थे मगर एक बलन्द दर्जा के सखुन फहम थे। अच्छे शोरा चिदा शेर उनको अज़बर थे। आज तक उनके भाई-बटे अदब की खिदमत कर रहे हैं।

श्रीमती कलावती :—शेर-ओ शायरी का शौक-ओ-ज़ौक महज़ मर्दों का इजारा ही नहीं। ख़वातीन में भी यह .खुदाई अतिया मयां है। इस सिलसिले में मैं एक बरगुज़िदा खातून का जिक्र करता हूं जिनका इस्म-ए-गरामी कलावती है। आप बचपन से तालीम-ओ-तदरीस से वाबस्ता रहे। उर्दू ज़ुबान से मानूस थे। शायराना फ़न-ओ-ज़ौक फ़ितरत में कुदरत से अता हो गया था। उनका बयाज़ शूम-ए-तकदीर से दस्तिआब नहीं हो रहा। इसी तरह उनकी छोटी कहानियों का ताहरीर भी अब तक हासिल नहीं हुई। हाँ मैं उनसे सुन ज़रूर चुका हूँ लेकिन यह मुझे मालूम न था कि वो जल्द दुनिया-ए-अदब को खैर बाद कह जायेंगी। आपको अच्छे शोरा का कलाम भी काफी हद तक अजबर था और शायराना अन्दाज़ से पढ़ते थे। बज्म-ए-सखुन करनाल में कभी

हाज़िर तो नहीं हो सके मगर पस-ए-परदा ब.ज़्म से गहरी दिलचस्पी रखते थे। मुझ को उनकी राहनुमाई हासिल थी और उनके इमा पर मैंने कई शायरों को दावत दी जिनके कलाम से ब.ज़्म भड़क उठी। वो उनको माता जी के नाम से याद करते थे और उनका दायमी वादा था कि माता जी नाम ही हमें दावत है। इसमें और किसी चीज का सवाल नहीं उठता। जब भी कभी उनसे मुलाकात हुई उन्होंने फौरन ही अपनी शायराना श.ख्सयत से एक मजलिस का आलम वजूद में ला दिया।

प्रींसिपल आर० के० सूद साहिब—आपके इल्मी तब्बोहुर का तज़करा लाहौर में ही रवां दवां हो गया था। अंग्रेज़ी और उर्दू में आप को एक खास अबूर हासिल था। अंग्रेजी पढ़ाने में वो मुस्तन्द उस्ताद थे। शायराना जौक भी फ़ितरी था उर्दू शेर ज़ुबान ज़द थे और .खुद भी बक्तन फ़क्तन रकम तराज़ होते थे। मुझसे उनका एक ज़ाती लगाव था और मेरे कलाम के वो क़दर दान-ए- सादिक़ थे। करनाल में भी अंग्रेजी पढ़ाने की शोहरत बेतहासा पायी। देहली में भी इस गूंज को समझा और वो देहली यूनिवर्सिटी में M. A. English एक ख़ास दावा से पढ़ाते रहे। बज़्म-ए-स ख़ुन करनाल और Study Forum करनाल की पुश्त थे। शायराना रोहज़ान .कुदरत ने उनमें कूट-कूट कर भरा था। मीर ग़ालिब, जौक ऐसे शोरा के कलाम से उनको वाबस्तगी थी। तबीयत ना साज रहती थी। अगुलियां .ज्यादा काम नहीं करती थी मगर क़लम नहीं छोड़ते थे। बज्म-ए-स.खुन करनाल के मुशायरों के चीदा अशआर मंगवाते थे और बजाए-.खुद एक अंजमन बने रहते थे मुझे फ़खर मासूस होता है जब वो मेरे कलाम को बार-बार मंगवाते और उस पर तबसरा फ़रमाते। वो लिखते थे कि उन्होंने मेरे कलाम के लिए एक अलमारी मख़सूस करदी है। मेरा .ख्याल यह है कि .ज्यादातर मेरा कलाम उनकी अलमारी में मौजूद है और मैं .खुद यहां से .ज्यादातर वहां से फ़ायदा उठा सकता हूं। यह उनके अदबी कमाल और क़द्रदानी का आईना है। ऐसे क़द्रदान और अच्छे पढ़ाने वाले कम नज़र आयेंगे। जन्नत से आये जन्नत चले गये।

पूर्ण कुमार होश—ब.ज्म-ए-स.ख़ुन करनाल के दिल दादा और इसके एजलास की रौनक़ थे। हाथ से लोहे को चलाते थे मगर दिल से शेर-ओ-शयरी को रवान रखते थे। जब भी बज्म-ए-म.ख़ुन ने उनको याद किया वो फ़ौरन रौनक-ए-बज्म हुए। दोस्त के दोस्त थे। शायर के शायर। एक Mechanical Engineer का इस दर्जा शायर होना तो अज्जब की बात है। गजल की निस्बत नज्म गोईपर आपका .ज्यादा ऐतकाद था मगर जब न.ज्म में आरूज़ पर पहुँचते तो तगज्जुल का आलम पैदा हो जाता था। न मुझे उनकी दोस्ती भूलती है न उनकी शेरोशायरी। उनके गैर मतबुआ और अनसुने अशआर का मुझे इन्तजार है अगर तावक्त-ए-तनाअत मोसूल हो गये तो अभी हाज़िर कर दूंगा वरना किसी और इशाअत में पेश करने की तव्वको रख लेता हूँ।

तालिब पानीपती—बज्म-ए स.ख़ुन करनाल की रौनक़ को आप भी अपनी शायराना तबीयत से दोबाला रखते थे। ब.ज्म को अपनी ही ब.ज्म मानते थे और शमूलियत में कभी किसी से पीछे नहीं रहते थे। शयराना फराख़ दिल्ली से अच्छे शेर की दाद देते थे और दाद लेते थे। उनका कलाम इनफ़रादी हैसियत रखता था और उसका बहुत सा हिस्सा तो शय हो चुका है जो नाज-ए-रीन की नजर में एक खास दर्जा रखता है। ग़ज़ल से उनको एक खास रगबत थी। गर्वनमैंन्ट सर्विस से फारिग होकर कैथल में मुकीम हो गए थे। वहां के अदबी दाईरा को रौनक़ थे तबीयत में शायराना जौक़ .कुदरती था। रामायण से उनको एक खास लगाव था वो जब ज़ाहिर हुआ जब उन्होंने रामायन को मसनवी की सूरत देनी चाही। इस सिलसिले में काफ़ी शेर कह भी डाले थे जिनमें उनका शायराना फ़न लहर-ओ-लचक नुमाइयां तौर पर देता है।

गुरदित्ता मल अनेजा—आप करनाल के चीदा एडवोकेट साहिबान में से थे। जहां इन्कम टैक्स कानून में महारत थी वहां शेर-ओ-शयरी का शौक

इन्तहा था। खामोश तबीयत थे मगर शेर की दाद देने में चहक उठते थे। राम भजन उन की जान था। शेर-ओ-सखुन उनकी शान थी बज्म-ए-सखुन करनाल में गहरी दिल चस्पी रखते थे। जो शेर पसन्द आता अपने वआजे पर चढ़ा लेते और आज तक उनके खानदान में वो मजमुजा मौजूद है। मुझे जहां मिलते शेर सुने बगैर खड़ी या बैठी मुलाकात खतम न होती थी।

हरबंस लाल अफ़सानागो—उनकी अफसाना गोई हकीकत गोई थी। ज़ुबान आजकल की जुबान थी जिसमें हिन्दी–उर्दू के साथ अंग्रेजी फ़िकरे भी शामिल हो जाते थे जैसे उनका अफ़साना साफ़गो था वैसे ही उनकी तबीयत भी साफ़गो थी। एक शाम बज्म-ए-सखुन करनाल के अजलास में अपना धुआंधार अफ़साना पढ़ते हुए अपनी तसलीफ़ की तारीख़ बयान करने लगे। फरमाया कि मैंने अपना कलम शेर लिखने के लिए उठाया था मगर सदाकत यह है कि मैं शेर गोई में चल न सका और अफ़साना गोई की तरफ़ रास्ता लिया। आपकी तबीयत में ज़राफ़त भी कूट-कूट कर भरी थी। तो मैंने भी गुस्ताख़ाना तबीयत से पूछ लिया। अगर अफसाना गोई में तबीयत न चली तो क्या करेंगे। बड़ी बेनियाज़ी से कह कहों की गूंज में जवाब दिया। मैं तन्कीद में उतर जाऊंगा।

हैड मास्टर भगवान दास रहेजा आप तालीमी इदारा से वाबस्ता थे और बेशुमार तालब इलमों को ज़िन्दगी के उम्दा से उम्दा रास्ते दिखाते थे। दर्स-ओ-तदरीस के इलावा शेर-ओ-सखुन से गहरी दिलचस्पी रखते थे। बज़्म ए सुखन-करनाल के वजूद से उनको ख़ास उन्स था। करनाल से बाहर रहते हुए वो बज़्म के इजलास में शमूलियत नहीं कर सकते थे मगर बज़्म की शायराना कार गुजारी से अशवार रहते थे। उनको ख़ुद भी शेर कहने का शौक था और शेर सुनने का भी। वेद मन्त्र को अशआर में ढालने का ऐहद कर लिया था। मेरे ज़ाती अशआर पर एक तामीरी तन्कीद फ़रमाते थे कि आप

Paradoxical तरीके से ज़िन्दगी की हक़ीक़तें बयान करने में खूब महारत रखते हैं। ज़राफत से भी उनको खास लगाव था। खुल के कहकहे लगाते थे जिनसे फ़ज़ा गूंज उठती थी एक बार इतफ़ाक से चन्द दोस्त इकट्ठे हो गये और बज्म की फ़ज़ा वजूद में आ गई। रहेजा साहिब ने पूछा ब.ज्म-ए-अदब का इजलास कब होगा। मैंने उनकी तबीयत की मा.जूनियत को देख कर जवाब दिया। यही तो बज्म-ए-अदब है आपने इसमें कोई बेअदबी देखी है। उन्होंने बे साख्ता कह कहे से अपना शायराना हिस्सा अदा कर दिया।

सेवाराम एडवोकेट—आप लाहौर में एडवोकेट रहे तो भी शायराना रगबत आपके साथ मुन्सलक रही। जब आपने तालीमी इदारे से अपना सिलसिला जोड़ा तो शयराना शौंक एक शोले की सूरत में भड़क उठी। जब मैं वहां तालिब इल्म था तो उनके अदबी रोजानत से मुझे तकवीयत मिलती थी इतफाक से करनाल में हम फिर एक दूसरे से आ मिले। वो इल्म-ओ-अदब का पौदा जो लाहौर में उखड़ गया था दोबारा लगा रहे थे। उन्होंने ब.ज्म-ए-सखुन की तन्ज़ीम की सलाह दी। उनके इस मशवरे से मैंने करनाल में ऐसा किया। वो मुन्सिफ़ मिजाज और शायर नवाज़ इन्सान थे जिनकी कमी आज तक महसूस होती है उनको तालिब इल्मों की मजालसत बहुत पसन्द थी और शौक ए-शायरी ने उनकी तबीयत को बहुत अज़ीम रखा हुआ था। जब भी मुलाकात होती मुशायरा में बदल जाती।

अबर अहसनी गन्नौरी—उस्ताद शायर का ब.ज्म-ए-सखुन करनाल पर बहुत बड़ा ऐहसान है। उनकी तसनीफ़ात आज तक बड़े ऐतराम से पढ़ी जाती है। आपने बेशुमार शेर कहे हैं और बहुत शायर हिन्दुस्तान को दिये हैं। उनका तोहफ़ा कैलाश चन्द्र नाज़ देहलवी जो आजकल बम्बई में मुकीम हैं आज तक ब.ज्म-ए-स.खुन की मजालिस की अपने कलाम और तरन्नम से गरमाता रहता है। अबर साहिब खुद भी ताहत-अल-लफ्ज़ पढ़ते थे और मजलिस की फरमाईश पर तरन्नम भी छेड़ते थे। हर तौर वो मजलिस की जान

थे। इल्म-ए-आरूज़ के क़वाईद और जवाबित पर उनको कमाल था। उनके शागिंद परवेज़ साहिब भी बज्म नवाज़ हैं और मुख्तलिफ इनामात हासिल कर चुके हैं।

विमल कृष्ण अशक

आप मेरे अजीज़ तालिब इल्म थे और ब.ज्म-ए-स.खुन करनाल की रौनक अफज़ाई में आगे आगे रहते थे उनकी शहरानां शख्सियत को पेश करने में मैंने अपने एक शेर पर इकतफा किया।

मरहमत उनको किये थें ज़ात-ए-हक़ ने अशक ओ-इशक
अशक हम को दे गये और इशक खुद ही ले गये।

तालिब पानीपती—आप फ़ितरतन शेर-ओ-सखुन के दिल दादा थे। .खूब कहते थे और .खूब सुनते थे। उन्होंने अब रामायण को मन.ज़ूम करने का तहिया कर दिया था और इब्तदां भी रामनाम लेकर शानदार अन्दाज़ से कर दी थी। ब.ज्म-ए-स.खुन करनाल पर उनके ख़ास शायराना ऐहसान हैं।

विद्या सागर गुप्ता—आप मेरें चार बरस Students रहे और बहुत करीब के तालब इल्मों में थे शेर कहते नहीं थे लेकिन शेर बड़े शौक से सुनते थे। इनके वालिद एक महफ़िल की तबीयत रखते थे। विद्या सागर की बदौलत उनके वालिद माजीद सेठ चमन लाल से मुलाकात-ए-शायराना हुई। वो सखुन शनस थे और यही वसफ विद्या सागर को विरासत में मिला था। आप भी शेर सुनते और बारहा अपने दोस्तों के साथ और मजलिस को गरमा देते। एडवोकेट हो जाने के बाद ही वो उसी तरह ब.ज्म-ए-स.खुन में दिल चस्पी लेते रहे। अभी दशहरे के करीब की बात है कि आप ने मुझे दशहरे का दावत नामा दिया जिस पर दशहरे के फातेह-ए-आज़म और दो जहान के मालिक

रामचन्द का हसीन-ए-ऊल हसीन नक्शसब्त था। चन्द दोस्त भी वक्त उस मौजूद थे तो मैंने अंगद और रावन का घुआंधार मकालमा सुनाया क्योंकि मैंने .खुद किसी वक्त अंगद के रोल में यह मकालमा रामलीला स्टेज पर पेश किया हुआ था। यह गर्जती हुई गु.फ्त.गू थी जिससे अशआरबरसते थे। मैंने यह मकालमा कभी रावन तो कभी अंगद की आवाज़ में और उनके ही अन्दाज़ में पेश किया। मैंने देखा विद्या सागर का चेहरा चमक उठा और उनकी नज़रों से मुस्कराहट की फुहार बरसने लगी। वही अदबी और शायराना मजाक सामने आया। आप कम गो और बिसयार फहम इन्सान थे। इस मजलिस से वो बहुत दिलशाद हुए। मैंने आप में शायराना शौक का जलबा बद अस्तूर देखा।

मास्टर गुरूदित्तामल सहगल—पढ़ने पढ़ाने का मलका आप में फ़ितरी था उनका ज़ौक शायरी के मैदान में बेहद था। हस्ब-व-हाल शेर कहते भी थे। बेशुमार शेर आपको याद थे और सड़क पर घुमते घुमते जब मुलाकात हो जाती तो एक मजलिस का आलम वजूद में आ जाता था। ब.ज्म-ए-स.खुन करनाल में शरीक होना उन्होंने एक कायदा बना लिया था यहां तक ही नहीं, अपने बच्चों में भी उन्होंने यह ज़ौक और शौक भर दिया है मैं इसे तहज़ीब का जुज़ब-ए-आजम मानता हूँ। जय उस्ताद ख़ाली असत। ऐसे मौका पर ऐसे ही कहना मौज़ूं है।

''ग़ज़ल्लियात''

ग़ज़ल-1

कुछ नहीं होता फ़ना सब इन हराफ़-ए-चश्म[1] है
फिर जहाँ खुद कहता रहता है जहां फ़ानी तो है

हाथ ख़ाली है मगर मेरा क़लम ख़ाली नहीं
आस्मां तक गूँजती मेरी ग़ज़ल ख़ानी तो है

बन्दा-ए-मजबूर हूँ, मज़ूर[2] हूँ, मक़हूर हूँ
इस पे भी मसरूर[3] हूँ तेरी निगेहबानी तो है

किस लिये अर्श-ए-बरीं[4] से उड़ के आया था यहां
और मुझ को कुछ नहीं मुझ को यह हैरानी तो है !

सच कहूँ तो मुझको गुलशन की ज़रूरत ही नहीं
शेर मेरे ग़ैब की मुझ पर गुल अफ़शानी तो है

मैं तो हूँ करनाल में करनाल मेरा मुझ में है
जा नहीं सकता शहानी याद शहानी तो है !

बादशाहत को तो है इन्सान से वाबस्तगी[5]
ज़िन्दगानी क्या है सारी दिल की सुलतानी तो है

जो कलाई देखने लगता है मेरे सामने
बाद-ए-आदम आदमी की और नादानी तो है

1. नजर का घोखा 2. बेबस 3. खुश 4. स्वर्ग 5. मेल

ग़ज़ल-2

पड़ी है क्या तुझे आते ही जाने जाने को
अभी तो ईद मनानी है तेरे आने की

मेरी नज़र को लगी है नज़र मिलाने की
तेरी नज़र को पड़ी है नज़र चुराने की

मेरी ज़ुबान मेरा दिल हैं आइने तेरे
है एक बात मगर जो नहीं बताने को

रवां है सिक्का मेरे नाम का ज़माने में
ख़बर नहीं है अगरचे मुझे ज़माने की

नहीं है पूछता कोई मेरी हक़ीक़त को
है धूम चार–सू कितनी तेरे फ़साने की

कोई मरे न मरे यह भी मौत होती है
कहानी ख़त्म हो जब याद आने जाने की

रहे वफ़ा में मेरा उड़ गया है सर कब का
अभी भी कोई ज़रूरत है आज़माने की ?

⊙

ग़ज़ल-3

रह जाये न बनके यह कहीं मट्टी में मट्टी
ए दोस्त न गर्दन को झुका और ज़्यादा

यह सर फिरे हैं पता इनका कुछ नहीं चलता
ऐसों को न सर अपने चढ़ा और ज़्यादा

रहमत की ख़ता तेरी ख़ताओं की ख़ता है
कर देख तो एक-आध ख़ता और ज़्यादा

है साफ़-गोई वस्फ़-ए-हमीदा[1] तो बिलाशक
कहने में मगर हो नसफ़ा और ज़्यादा

किसी दिल से किसी को मैं जफ़ाकार[2] समझता
जब हो गई मुझ से ही वफ़ा और ज़्यादा

तेरे लब-ए-शीरीं से इक लफ्ज़ है काफी
इक लफ्ज़ खुदारा न-सुना और ज्यादा

जब इतनी ख़ताओं से नहीं जागी है रहमत
कर देख तो एक और ख़ता और ज़्यादा

फिर उठ न सके देखना गर्दन कहीं तेरी
बेशक यह झुके पर न-झुका और ज़्यादा

1. अच्छा झूठा 2. जालिम

ग़ज़ल—4

दवा वालों ने ता मिल कर दवा को
दुआ वालों ने अल्लाह् से दुआ को

न रुक पाया मगर रस्ता क़ज़ा का
गई हो सांस जैसे घुट शिफ़ा को

.खुदा मेरा न सस्ता है, न होगा
क़सम फिर किस लिये खाऊं .खुदा का ?

हवा जितनी भी बांधे ज़िन्दगानी
यह सब कारीगरी है तो हवा की

वो करने भरने के दिन जा चुके हैं
जज़ा क्या है, कहानी क्या सज़ा की ?

ज़रूर अपने में कोई ऐब होगा
यहां जो आ गया उसने जफ़ा को

मैं इक ही काम करना जानता हूँ
जहां मौक़ा लगा मैंने ख़ता का

जफ़ा वालों के ता हैं लाल तुरे
वुही मारा गया जिसने वफ़ा को

1. पुण्य का फल

ग़ज़ल-5

देखने में तो अच्छे लगते हैं
दिल के देखें वो कैसे लगते हैं

हम तो हैं यार पैसे-पैसे के
बात करने के पैसे लगते हैं

उन की आंखों का मैं नहीं कहता
अ़क्ल के तो वो अन्धे लगते हैं

जब भी मैंने तो उनको देखा है
कुछ न कुछ लिखते-लिखते लगते हैं

मेरा चेहरा चमकता लगता है
मेरे दिन भी चमकते लगते हैं

कल जो कागज़ के फूल लगते थे
आज उन्हें फल भी लगते-लगते हैं

मैं उन्हें जाने कैसा लगता हूँ
मुझको लेकिन वो प्यारे लगते हैं

मार सकते हैं मौत को भी वो
जो मुहब्बत के मारे लगते हैं

ग़ज़ल-6

ज़िन्दगी ने मुझे बताया है
कार से आगे कोई काम नहीं

चूर अपने नशे में रहता हूँ
हाथ मीना नहीं है जाम नहीं

तेरे मुंह में जो अल्लाह-अल्लाह है
क्या यही चीज़ राम–राम नहीं ?

आम सुनते हैं आम चलती है
बात अपनी तो चाहे आम नहीं

काम पुख़्ता है इसलिये अपना
बात पक्की है अपनी ख़ाम[1] नहीं

जिस से घर बार भी नहीं चलता
उस बशर का खुदाई काम नहीं,

प्यार हर एक से है शायर को
वो किसी का मगर गुलाम नहीं

मैं न समझूं यह और है लेकिन
तेरे कहने में कुछ कलाम नहीं

कितना आबाद है खुदा का घर
ऊंचा मस्जिद तो है इमाम नहीं

1. कच्चा

ग़ज़ल-7

मेरा ख्याल मेरा दिल मेरो ज़ुबान इक है
मेरो ज़मोन फज़ा मेरा श्रासमान इक है

दिखाई देते हैं दो हैं तो बेशुमार जहान
यद् उन को याद रहे सब का हुकुमरान इक है

चला है कोई किधर तो गया है कोई किधर
वो श्रायें जायें जिधर चाहें कारवान इक है

तेरा है दावा तेरी है मेरो मेरी मेरी
खुदाई सारो तो कहतो है दास्तान इक है ?

हैं इश्क़-श्रो-हुस्न श्रब ऐसे मक़ाम पर पहुँचे
हूँ तेरे दर पे या मेरे पे श्रास्तान इक है

श्रंधेरा श्रौर उजाला है एक सूरज से
वो रात दिन हो कि शाम-श्रो-सहर निशान इक है

ग़ज़ल-8

जब अता हो चुका है इश्क़ तुझे
फिर तुझे कौन सी तमन्ना है ?

मैंने शायद उसे नहीं देखा
उसने सौ बार मुझको देखा है

हर कोई अपनी फ़िक्र आप करे
कोई अपना है या पराया है

काश! वो भी तो कोई पढ़ सकता
जो किसी की जबीं पे लिखा है

मैं किसी को भी कुछ नहीं समझा
कोई मुझको तो क्या समझता है

उसके परदे की ख़ैर हो या रब
इश्क़ परदे को क्या समझता है

तू किसी काम का नहीं अख्गर
लिखना-लिखना ही तुझको आता है !

ग़ज़ल-9

जब तबीयत ब्यान हाती है
सारी दुनियां जवान होती है

जिस्म मेरे में जान हो कि न हो
बात मेरी में जान होती है

आदमी एक है वो लाखों में
एक जिसकी ज़ुबान होती है

दिल से दिल को अगर कोई सुन ले
इस में ही उसकी शान होती है

हाथ जिस का भी साथ देता है
उसकी ही आन-बान होती है

तीर जाता है इसलिये सीधा
उसके पीछे कमान होती है

दिल को दिल वाला ही समझता है
दिल तो सोने की कान होती है

मौत या ज़िन्दगी में फ़र्क़ नहीं
महज रस्म-ए-जहान होती है

शीरीं अशिया हजार हों बाशद
एक टाफी में शान होती है

फीका पकवान हो तो है दुनियां
ऊंची लेकिन दुकान होती है

दिल है तो ज़िन्दगी भी है वरना
कोयले की ही कान होती है

देखो जिस रंग में भी अखगर को
उसकी अपनी ही शान होती है !

ग़ज़ल-10

आज के दिन गाई थी मैंने विलादत राम की
आज तक है मेरी हस्ती पर इनायत राम की

हो रहा है ज़मज़मा परदाज़ फिर मेरा क़लम
इसपे होता आई है राहमत-पे-राहमत राम की

और तो क्या देखते हैं और ही जाने मगर
हर तरफ़ मुझको नज़र आती है सूरत राम की

राम तो मेरा बड़ा भाई है बेशक़ भाइयो
इससे बढ़ कर है मुझे हासिल मुहब्बत राम की

तुम मुझे जो कुछ भी समझो कुछ नहीं शिकवा मुझे
शाद रहता हूँ कि मुझ पर तो है शफ़क़त राम की

आदमी ख़ुद क्यों न बन बैठे ज़माने का ख़ुदा
करनी तो फिर भी उसे होगी इबादत राम की

मैं हूँ या मेरा क़लम हो या कि हो मेरा कलाम
नाम को मेरे हैं लेकिन है करामत राम की

लात मारी राज को बन को रवाना हो पड़े
थी रमूज़-ए-ग़ैब से वाक़िफ़ तबीयत राम की

जिस्म उनका गो नहीं आता है नज़रों से नज़र
ज़र्रे-ज़र्रे से अयां है फिर भी क़ुदरत राम की

मैं जो कहता हूँ सरीहन टूटे फूटे शेअर हैं
जानने वाले इन्हें कहते हैं रामत् राम की

दौलत-ए-जावेद की 'अख़गर' अगर हो आरज़ू
छोड़ कर दुनियां के धन्धे कर इबादत राम की

ग़ज़ल-11

उम्र कितने मज़े से कटती है
कुछ तो आई तो कुछ गई कर लो

सुनते जाओ न सुनने वाली भी
फिर भी हँस-हँस के अनसुनी कर लो

दिल नहीं है तो कुछ नहीं चाहे
आशिक़ी कर लो दिलबरी कर लो

ज़िन्दगी का यही तक़ाज़ा है
दुश्मनों से भी दोस्ती कर लो

जो नहीं होता वो नहीं होता
मैं भी करता हूँ आप भी कर लो

दिल कहाँ है किसी के पहलू में
अपने दिल से ही दिल्लगी कर लो

रोशनी है बग़ैर उजाले के
सद आहों से रोशनी कर लो

काम दिल से अगर नहीं चलता
चलो कुछ देर बेदिल्ली कर लो

सर बलन्दी की हो अगर ख़्वाहिश
सर झुकाकर ही बन्दगी कर लो

ग़ज़ल-12

ग्रौर हर चोज़ चोज़ हो लेकिन
हर .ज़ुबां ता .ज़ुबां नहीं होतो

शेग्रर नाज़िल नहीं हुग्रा करते
जव तबोयत रवां नहीं होतो

हुस्न ग्रौर इश्क़ फोके लगते हैं
जब तबीयत जवां नहीं होतो

ग्राई खुलद-ए-बरीं से हो लेकिन
ज़िन्दगो जाविदां नहीं होतो

दश्त में फूल खिलते हैं लेकिन
वा जगह गुलस्तिां नहीं होतो

दर्जा दुनियां का हो फ़लक से बुलन्द
ख़ाक फिर ग्रास्मां नहीं होतो

जान है यह तो जीने वालों की
ज़िन्दगी दास्ताँ नहीं होती

देखता हो नहीं कोई वरना
तेरो सूरत कहां नहीं होतो

ग्रन्धा रहता है ग्रादमी जब तक
तेरी कुदरत ग्रयां नहीं होती

ग़ज़ल-13

जब तुझे संग तराशो में कमाल आता है
मेरे एहसास को शोशा न बनाया होता

आदमो क्या है वो ज़र्रात में इक ज़र्रा है
काश ! ज़र्रे को ज़माना न बनाया होता

जब अच्छाई से जला करतो थो दुनियां तेरो
अच्छा होता मुझे अच्छा न बनाया होता

जोने वाले हो जिसे कोसते रहते हैं सदा
ऐसो दुनियां को तो ऐसा न बनाया होता

देखना था जिसे वो तो नज़र आया हो नहीं
दे के आंखे मुझे अन्धा न बनाया होता

मसल्ला बन गया हूँ मैं तो हक़ीकत बन कर
तुझ को क्या था मुझे अफ़साना बनाया होता

और हर चोज़ का जब दे दिया इरफ़ान मुझे
आदमियत से तो कोरा न बनाया होता

अब तो जो कहता हूँ दिल खोल के सुनना होगा
या तो फ़न शेर-ओ-सुख़न का न बनाया होता

और से और हो कर देता मैं दुनियां तेरो
मुझ को दानाओं में दोवाना बनाया होता

ग़ज़ल-14

जिस बशर से दो जहां का फ़लसफ़ा छाना गया
क्या ताअज्जुब है उसी से मैं नहीं समझा गया

ज़िन्दगी को देखिये जन्नत भी है दोज़ख़ भी हैं
दोज़ख़ उसके वास्ते है इससे जो घबरा गया

मैंने यह देखा है जिसको मैंने देखा इक नज़र
ता क़यामत फिर वो ख़ुद से भी नहीं देखा गया

ख़ुद को चमकाने से कोई भी चमक सकता नहीं
महज़ वो चमका किसी जो और को चमका गया

सैर-ए-गुलशन तेरी नज़रें देखतीं भी किस तरह
जबकि पहला फूल तुझको देखकर शरमा गया

जब अचानक तुझ को देखा दिल में क्या उठा ख़्याल
चाहता था शेर लिख डालूं नहीं लिखा गया

जान के खाती है दुनियां परदा-दारी का फ़रेब
कोई समझा है कि वो मुझसे नहीं जाना गया

ग़ज़ल–15

मैं तो समझा था मुझे दिल से भुलाया तूने
बात निकली तो ये निकला कि बुलाया तूने

ज़ात मेरी से है वाबस्ता ख़ुदाई सारी
मुझको हो देख अगर कुछ नहीं देखा तूने

तेरा ही काम था जब और कोई क्या करता ?
दो जहां बिगड़े पड़े थे कि सम्भाला तूने

तेरा ख़त ! और पहुंच पाये न मुझ को तोबा
शुक्रिया तेरा कोई ख़त नहीं लिखा तूने

हम अज़ल से ही बहुत सोच के आये थे यहाँ
क्या हसीं बात थी वो यह भी न सोचा तूने

तुझ को मालूम नहीं मैंने थी जन्नत लूटी
मैंने तो देखा तुझे और न देखा तूने

अपनी हस्ती को तू समझेगी ऐ दुनिया क्योंकर
साये मेरे को ही जब कुछ नहीं समझा तूने

कुछ नहीं समझेगी ऐ दुनियां तू दुनिया में कभी
फिर तुझे कह दूं अगर मुझको न समझा तूने

ग़ज़ल–16

चाहे जिसे वो चाहें मेरे दिल का हक़ तो है
ग़ाफ़िल हो इस से कोई यह ग़ाफ़िल का हक़ तो है

तूफ़ां कुछ और चीज़ है साहिल कुछ और चीज़
तूफ़ान में बदलना भी साहिल का हक़ तो है

करना कर्म न करना है मर्ज़ी करीम की
लेना कर्म न लेना भी साइल का हक़ तो है

ख़ंजर से जान लेना हो क़ातिल की शान अगर
देना नज़र से ज़िन्दगी क़ातिल का हक़ तो है

हक़ फ़र्श से है अर्श तक हक़दार का अगर
कुछ अपना हक़ जताना भी बातिल का हक़ तो है

हर कोई बाँध लेता है जब इसको आजकल
बजना–न–बजना ठीक भी पायल का हक़ तो है

मैं मानता हूँ दिल को मेरी मानता है दिल
कुछ और कर दिखाना मेरे दिल का हक़ तो है

——

ग़ज़ल-17

बनती है वो दुआ अगर भरता हूँ आह भी
दिल शाद हो रहे वहां जो भी जहां गया

जो दिल्लगी कभी थी वो दिल की लगी बनी
उसका धुआं फ़लक को भी करता धुआं गया

तुझको ग़ज़ल का शौक़ हुआ करता था कभी
वो ज़िन्दगी का लुत्फ़ बता अब कहां गया

कुछ तो ख़्याल हो मेरे ख़ाली ख़्याल का
इसको बुला तो देख वहां तू जहाँ गया

मेरे तसव्वुरात में तस्वीर थी तेरी
तस्वीर क्या मक़ाम था आख़िर कहां गया ?

हर कोई और तो मेरी नज़रों में है मगर
जिसको मैं देखता था वो आखिर कहां गया

लटका हुआ है बीच में बेचारा आदमी
पांव नहीं जमीन पर और आस्माँ गया

है आदमी के दम से ही हर चीज़ का वजूद
राज़-ओ-निआज़ भी गये जब राज़दाँ गया

ग़ज़ल-18

आना तो हमने नहीं था लेकिन आना पड़ गया
बोझ दो आलम का आते हो उठाना पड़ गया

यह .खुशी कम है कि पहुँचा है किसी दिल को क़रार
क्या हुआ गर इसमें अपना दिल दुखाना पड़ गया

मक्तब-ए-अज्ज़ली में हमने तो पढ़ी थी सरकशी
फिर भी अपना सर किसी दर पर झुकाना पड़ गया

हुस्न जिस को परदा-दारी थी ज़माने में पसन्द
इश्क़ जब आया उसे परदा उठाना पड़ गया

जब न उसकी शान के शायां था माहौल-ए-जहाँ
अपने दर्द-ए-दिल को पहलू में दबाना पड़ गया

बज़्म से जब बज़्म वाले उठ के जाने लग पड़े
हमको देखा देखो उनके पीछे जाना पड़ गया

हम जो दुनिया से निहां रखते थे अपने दिल का राज़
राज़ की तो क्या उन्हें दिल भी दिखाना पड़ गया

——

गज़ल-19

इक मुझको भुलाने से सौ सुख हैं मिले तुझको
ऐ काश ! तुझे मैं भी ऐसे ही भुला सकता

देखें तो खुदा उसका सब कुछ ही बनाता है
ऐ काश ! खुदा वाला भी कुछ तो बना सकता

कहते हैं कि दिल वाले हैं कोह–कनी करते
ऐ काश ! मैं दिल वाला इक नहर चला सकता

दुनिया है चढ़ी कितनी इक सर को झुकाने से
ऐ काश ! कहीं मैं भी सर अपना झुका सकता

बातों के तो कितने ही पुल बांध लिये मैंने
ऐ काश ! मैं उनमें से एक लफ्ज़ निभा सकता

छुप–छुप के भी इतना कुछ तूने तो दिखाया है
ऐ काश ! अयां होकर मैं कुछ तो दिखा सकता

औरों ने शफ़ा पाई है एक मेरे दम से
ऐ काश ! मैं हाथों से दर्द अपना दबा सकता

ज़िम्मा था लिया मैंने तो सारी खुदाई का
ऐ काश ! यहाँ आकर इक पत्ता हिला सकता

औरों से तो हँस हँस के हाल अपना छुपाया था
ऐ काश ! इसे अश्कों से तुझ से भी छुपा सकता

ग़ज़ल-20

इश्क़ हो या हुस्न इसको कौन समझा है यहां ?
कुछ तो सोचो ख़ैर से किस सोच में गुम हो मियाँ ?

और सब कुछ भूलना तो काम आना है मगर
हम कभी ढूंढा नहीं करते हैं अपना क़दरदां

वो तो है सबका मुहाफ़िज़ इसमें कोई शक़ नहीं
आदमी को चाहिए ख़ुद भी हो अपना पासबां

चाँद तारों से मुज़य्यन हो के शान-ओ-शोक़ से
देखता रहता है सारी रात मुझको आस्मां

उसके मुंह में इक ज़ुबां है गिनले बेशक आदमी
एक है उसकी ज़ुबाँ तो एक हो उसको ज़ुबां

इतने में हो ज़िन्दगी और मौत दोनों ख़त्म है
आदमी आये यहां और आदमी जाये वहाँ

हर किसी का ज़िन्दगी में अपना-अपना दौर है
है कभी दौर-ए-बहारां तो कभी दौर-ए-ख़िज़ां

ग़ज़ल-21

मैं देख के अनदेखा भी कर जाता हूँ अकसर
लेकिन यह समझना मुझे अन्धा न समझना

हर कोई ही तारीफ़ किया करता है अपनी
मैं जितना भी कहता रहूँ उतना न समझना

दिल ही की तरह नज़रें भी तो खा जाती हैं धौका
जैसा नज़र आये कोई वैसा न समझना

इक तेरी फ़क़त नज़र-ए-इनायत से है मक़सद
नाज़ुक सी किरन मेरी तमन्ना न समझना

बेकार नहीं जायेंगीं गिरती हुई बूदें
अश्कों को कभी टूटता मेला न समझना

चेहरों की नुमाईश के सिवा क्या है जहां में
तुम फिर भी तमाशे की तमाशा न समझना

अश्आर जिन्हे कहते हैं शायर की तड़प है
इस फ़ैज़-ए-इलाही को तमाशा न समझना

हां भूक भी लगती है उसे प्यास भी लेकिन
शायर को ख़ुदारा कभी भूका न समझना

ख़्वाहिश तो है इन्सान को इन्सान बना दूं
इक वहम है मेरा यह इरादा न समझना

जो तूने किया है वो तेरा अपना लिखा है
अपना किया तक़दीर का लिख्खा न समझना

ऐसा न हो मैं और से कुछ और ही निकलूं
ऐसा न समझना मुझे वैसा न समझना

ग़ज़ल-22

जब क़लम हो मेरा ख़ज़ाना है
मेरो दौलत का ठिकाना है

आने जाने से आना जाना है
मिलना जुलना हयात ख़ाना है

ज़िन्दगो खैंच लाया है आदम
आदमी ने इसे चलाना है

कोई मौज़ूं जगह मिले तो बने
दर्द-ए-दिल को कहां दबाना है

आज ही मैं ज़मो पे उतरा था
.खुदा को अच्छी जगह मनाना

सारी दुनियां भुलाये बैठा हूँ
एक तुझ को अभो भुलाना है

इक ज़माना था बोतता भी न था
अब तो पल पल नया ज़माना है

सारी बातें हैं वहम की अख़गर
कुछ नया है न कुछ पुराना है

यह है अन्दाज़ ज़िन्दग़ानी का
कुछ बताना है कुछ छुपाना है

गज़ल-23

कुछ किधर कुछ किधर हो जाती है
.खैर से सब .गुजर हो जाती है

बात सच्ची हो बात झूठी हो
काम अपना तो कर ही जाती है

पतझड़ आये खिज़ां के हमले हों
किस्मत-ए-गुल सवंर हो जाती है

जिन्दगी लाख टेढी मेढ़ी हो
चीज़ जाते जाते सुधर हो जाती है

चीज़ छोटी हो चीज़ मोटी हो
छोड़ अपना असर हो जाती है

जिन्दगी क्या है खादिम-ए-दिल है
जिधर वो हो उधर ही जाती है

राज़ दिल के कोई कहे न कहे
फैल उन को खबर ही जाती है

आ गयी है तबीयत अब उन पर
देखना है किधर ही जाती है

भूल जब भूल के ही हो जाये
दे के अच्छा समर ही जाती है

रोक सकते नहीं रवानी को
जाये बेशक़ जिधर ही जाती है

मेरी परवाज़ किस ने देखी है
यह तो बेबाल-ओ-पर ही जाती है

कौन पहुंचे तबीयत अपनी को
यह किधर से किधर हो जाती

जो भी शय ज़िन्दगी में आ जाये
कुछ न कुछ तो बो कर हो जाती है

कितनी लम्बी ही क्यों न हो अख़गर
शब-ए-हिजरां गुज़र ही जाती है

बा वफ़ा क्या है ज़िन्दगी अख़गर
मरने वालों पे मर ही जाती है

ग़ज़ल-24

पड़ी है क्या तुझे आते ही जाने जाने की
अभी तो ईद मनानी है तेरे आने की

मेरी नज़र को लगी है नज़र मिलाने की
तेरी नज़र को पड़ी है नज़र चुराने की

मेरी ज़ुबान मेरा दिल है आईना तेरा
है एक बात मगर जो नहीं बताने की

रवां है सिक्का मेरे नाम का ज़माने में
ख़बर नहीं है अगरचे मुझे ज़माने की

भुला दिया है मुझे तूने सब यह कहते हैं
अच्छाई की थी ज़रूरत भी क्या बताने की

नहीं है पूछता कोई मेरी हक़ीक़त को
है धूम चार सू कितनी तेरे फ़साने की

कोई मरे न मरे यह भी मौत होती है
कहानी ख़त्म हो जब याद आने जाने की

रहे वफ़ा में मेरा उड़ गया है सर कब का
अभी भी कोई ज़रूरत है आज़माने की

न भूलने न भूलाने में आता है अख़गर
किये तो जाता हूँ कोशिश उसे भूलाने की

ग़ज़ल—25

तेरी याद यादों पे छा ही गई
न आते न आते तू आ ही गयी

गया तो कोई साथ किस के गया
गई साथ तो इक वफ़ा हो गयी

बक़ा तो है बाक़ी खुदा की तरह
अदम को गयी तो फ़ना हो गयी

क़दम तो मेरे सू-ए-मंज़िल चले
मेरी राह लेकिन जुदा हो गयी

कोई पास उसके नहीं जा सका
गई तो फ़क़त इक दुआ ही गयी

वो रह मशरक़ी हो कि हो मग़रबी
हर इक राह सू-ए .ख़ुदा हो गयी

जो देखें तो था भी जवानी में क्या
मगर अपना सिक्का बिठा ही गयी

जहां उस को ताऊस कहता रहा
हयात उस को उल्लू बना ही गयी

चला मैं तो यह ज़िन्दगी ने कहा
गले से बिलाख़िर बला ही गयी

चटके सितारे

तुझ को भूलूं तो ,खुदा याद नहीं रहता है
काबा—ए—दिल मेरा आबाद नहीं रहता है

☼

मैं आ तो जाऊं वहां तुझे को देखने के लिए
यह देखता हूँ कहीं देखता न रह जाऊ

☼

खंजर उठा के हाथ फिर उससे उठा लिया
गर्दन मेरी न मार के रूसवा बना लिया

☼

तू ,खुदा बता कि उसे किस तरह करार आये
तेरी वफ़ा ही जिसे वेक़रार करती हो

☼

मुझे नसीब नहीं है शराब का मज़हब
इसीलिए तो मैं मोमिन[1] हूं और काफ़िर भी

☼

मेरे ख्याल ने उड़ उड़ के तुझ को थाम लिया
कमाल—ए—इशक़ से मेरे कलम ने काम लिया

☼

नज़र है बातिन[2] की तर्जमा[3], भी, नज़र है ज़ाहिर की दास्तां भी
हयात का कुछ नहीं रहेगा अगर नज़र में फ़तूर होगा

☼

हैं वो अपने मिज़ाज के मालिक
दिल जब आता है आ भी जाते हैं

(1) इमान (2) अन्दर (3) कहानी करनी वाली

लैलि—ए—माहमल[1] नशीं से इतना तो कह दे कोई
कैस को ले जा रहे हैं सू—ए—ज़न्दा[2] —देखिये

जहां भी मैं नहीं होता वहां भी होता हूं
है नूर जिसकी नज़र में वो देख सकता है

याद तेरी तो जब भी आती है
साथ अपने तुझे भी लाती है

अभी यहां तो अभी वहां हूं मैं
कौन जाने कहां कहां हूँ मैं

मुझ पर पहाड़ टूटे या आसमान टूटे
मेरी जबीं[3] से तेरी इक आसता न छूटे

अज़्म[4] रासिख़[5] हो तो कुछ दुशवार मन्ज़िल भी नहीं
अज़्म ही की पस्तियां मन्ज़िल की हैं दुशवारियां

तेरी वफ़ा से मुझे शायरी इनायत[6] है
तेरी नज़र से मुझ रोशनी इनायत है

(1) पालकी में बैठने वाली (2) कैद खाना (3) माथा (4) इरादा
(5) छोटापन (6) बरदान

BLANK VERSE

मुअर्रा

हाथ अपना तो चीज़ अपनी है

हाथ अपना तो चीज़ अपनी है
एक मालिक की कितनी चीज़ें हैं
एक मालिक के कितने नौकर हैं
चीज़ें नौकर ही साफ़ करते हैं
और उनको सम्भाल रखते हैं
बारहा: उन के अपने मालिक को
उनकी कोई ख़बर नहीं होती
मैं समझता हूं चीज़ उसकी है
हाथ जिसका है चीज़ को लगता
हाथ मालिक का जब लगे उसको
इक चमक चीज़ में है आ जाती
मैं तो इस से भी आगे जाता हूं
हाथ मालिक का चीज़ मालिक की
हाथ अपना तो चीज़ अपनी है

मुअर्रा

सौ फ़रिश्तों का इक फ़रिश्ता है

कुछ न .कुछ कर के आदमी .खुद को
पाकबाज़[1] — ओ — अज़ीम[2] करता है
दिल ही दिल में छुपा के तलछट[3] को
.खुद को श.फ्फाफ़ — औ — साफ़ रखता है
और ऊपर से आदमी की .ज़ुबां
इक सफेदी का रंग देती है
लोग कहते हैं देख कर उस को
क्या है मासूम आदमी देखो
सौ फ़रिश्तों का इक फ़रिश्ता है
दर हक़ीक.त वो इक फ़रेबी है
शोब्दा[4] बाज़ है मदारी है
वो किसी और का न है अपना
दूसरे को चराता रहता है
बात करता है काम अपने की
बात करता है अपने मतलब की

(1) पवित्र (2) बड़ा (3) बचा कुछ (4) धोखा देने वाले

मुअर्रा

ब.गैर दर्द कोई कुछ भी कर नहीं सकता

है आजकल के ज़माने में कितनी बेचैनी
तुझे बताऊं कि इसका बड़ा सबब क्या है
जो इन दिनों हैं मु.फक़्सिर[1] -फ़िलाफ़सर–शायर
वो फ़िक्र फ़ाके से आज़ाद है मज़े में हैं
तलाश—ए—रिज़्क़ में उड़ना उन्हें नहीं पड़ता
तहखई कर नहीं सकते हैं वो नई राहें
वो पड़ गये हैं तसाहुल में ऐश-ओ-इशरत में
तख़्म–ओ–लात पे उनके है मुर्दनी छाई

(1) सोचने वाले (2) सुस्ती

———

किसी के पहलु में उठता किसी का दर्द नहीं
जब अपना दर्द नहीं है किसी का कैसे हो?
यह जानिए कि वो के बेदर्द बन चुके हैं नदीम
ब.गैर दर्द कोई कुछ भी कर नही सकता
कभी तो इशक़ तस्सवुर को आंच देता था
अब इशक़ की जगह शौहरत ने छीन ली है नदीम
बलन्दियों की जगह पस्तियों ने खी ली है
जो ठेस इशक़ से लगती थी अब नहीं लगती

जो चोट पड़ती थी रोटी से अब नहीं पड़ती
किसी का दर्द जो उठता था अब नहीं उठता
किस का दर्द नहीं है किसी के पहलु में
तो किस बिनाह पे किसी का क़लम उठे हम दम

— —

नया ख़्याल किसी ठेस से ही उटता है
ख़्याल पिछले तो पामाल हो चुके हैं अब
मगर नदीम अभी इक ख़्याल बाकी है
पड़ा हुआ है अछूता ख़्याल गांधी का
इसे भी कोई ज़रा तजरबे में ले आये
इसी से दूर हो बेचैनी ऐन मुमकिन है
मगर नदीम मुझे इस में एक डर भी है
रिया[1] —ओ—मकर में मलबूस[2] है जहां सारा
चलेगा कैसे भला रास्ती के रस्ते पर
उखड़ती दुनिया का गांधी ही इक सहारा है

(1) धोखा (2) कपड़े पहने हुए

O

मुअर्रा

चुराये आम बहुत ही रसीले होते हैं

मैं बचपन से ही आमों का शौंक रखता था
चुरा चुरा के ही मैं आम चूसा करता था
मेरी शाहानी थी मशहूर अपने आमों से
थे बाग़ आमों के शादाब मेरे गाँओं के
बड़े मज़ो से चढ़ा करता था मैं पेड़ों पर
लटक के शाख़ लटकती से मैं था चढ़ जाता
दरख़्त इतने घने थे कि छत हों लगते थे
जब एक दरख़्त पे चढ़ता तो सब पे फिरता था
जो आम काम का होता वो मैं उड़ा लेता
मुझे तो देख न सकते थे मालिक—ओ—माली
मैं इस हुनर में परिन्दों से आगे उड़ता था
यह तोते वोते तो टें—टे ही करते रहते थे
हर एक अपने हुनर का ही चोर होता है
हुनर का चोर था आमों का चोर भी था मैं
चुराये आम बहुत ही रसीले होते है

मुअर्रा

फ़रेब .खुरदाः का दरमा फ़रेब होता है

अचानक एक सुरीली सदा फ़जाओं से .फूटी
सदा सुरीली सुरीले ज़माने ले आई
मेरे दिमाग मेरे दिल पे र.क्स[1] करने लगी
मेरी नज़र में पलट आया इक हसीं माज़ा
सवार कितने ज़माने थे उन सदाओं पर
वो एक जशन—ए—मुबारक थी .खूबसूरत थी
व.फूर--ए—शौक़[1] से मैं उसके साथ साथ रहा
फ़रेब—ए--दिल थी, फ़रेब--ए--नज़र फ़रेब-ए--.ख्याल
फ़रेब .खुरदाः[2] का दरमा[3] - फ़रेब होता है
वो .सुनते .सुनते सदा घुल गई फ़ज़ाओं में

(1) नाच (2) शौक की ज्यादता (3) धोखा खाना (4) इलाज

मुअर्रा

ज़माना कुछ भी करे मुझ से मैंने जीना है
नदीम 14 बरस मैंने धोका खाया है
ज़माना अब भी .खुदा जाने क्या खिलायेगा
मैं जीता आया हूं अब तक तो धोके खा पी के
जहांन कुछ भी करे मुझ से मैंने जीना है
ज़माना चाहे मुझे रोटी पानी दे या न दे
नदीम मैंने हमेशा ही ज़िन्दा रहना है
मुझे डराने दबाने के मशवरे कैसे
मुझे .गुलाम बनाने की साज़िनें क्यों हैं
ख़राब जिन की हो नीयत ख़राब होते है

मुअर्री

यह दशहरा तो मेरी जान है ऐ मेरी जान

आज क्यों देर से आया है दशहरा बोलो
आज क्या सोच के आया है दशहरा भाई
इस ने आना था यहां एक महीना पहले
लेकिन आया तो है वो एक महीना पीछे
उसका कुछ दोष नहीं दोष तो यह मेरा है
मैं ही तैय्यार न था उसके स्वागत के लिए
वो तो हर व.क्त है तैयार यहां आने को
हम ही तो फैसला आपस में नहीं कर सकते
फूट के बीज के फ.ल फूल चखे हैं हमने
और तो और दशहरे ने मजे चखे हैं
काम की बात करो फूट की बातें छोड़ो
यह दशहरा तो मेरी जान है ऐ मेरी जान
साल भर रास्ता तकता ही रहा हूं इसका
साल भर ढूढ़ता आया है दशहरा मुझको
मुझ को कुछ अपना तो कुछ उसका भी रहता है .ख्याल
कौन सी चीज नहीं साथ दशहरा लाया
कौन सा रूप नहीं साथ है उसके आया
साल भर जो भी दिखा सकता नहीं मुझे को जहां
एक ही दिन में दशहरा वो दिखा देता है
उसके आने से कर्म राम का आ जाता है

मुअर्रा

क्या है माज़ी वो एक जादू है
गुज़रे वक़्तों की कड़वी यादें भी
याद करने से मीठी लगती हैं
मेले लगते हैं बीती बातों के
जमघटे साथ साथ यारों के
क्या है माज़ी वो एक जादू है
वो अदावत भी इक मुहब्बत है
दुशमनी दोस्ती ही लगती है
जो थे दुशमन वो बा असूल ही थे
शान अपनी नहीं गिराते थे
अज़मत अपनी नहीं गंवाते थे
सीना सीने से ही टक्करता था
चेहरा चेहरे को चोट देता था
पीठ में क्यों भला छुरा घौंपे
वार नीचे कमर से कौन करे
ऐसे दुशमन जो याद आते हैं
ख़ुद ब.ख़ुद दिल मचल ही उठता है
मेरा मतलब तो है बहुत सादा
आज के दोस्त क्या हैं ख़ुदा जाने
दुशमन उस व.क्त के थे दोस्त नदीम

मुअर्रा 3

नदीम दिल ही तो है दो जहां का आईना

गुज़र गया हुआ फिर हाथ तो नहीं आता
जो हाथ उसके लगे हैं वो कौन भूलेगा
वो हाथ क्या हैं वो तो उस्ताद हैं ज़माने के
नदीम तजरबा मीठा भी तजरबा तो नहीं
जो तलख़ तजरबा होता है मीठा होता है
वो इसलिये कि नतीजा जो इसका मीठा है
तमाम उम्र ही वो काम आता रहता है
किसी के दिल को अगर देखने की ख़ाहिश हो
तो अपने दिल को ही इन्सान देख ले हमदम
.खुदाई सारी का न.क्शा वहां ही मिलता है
नदीम दिल ही तो है दो जहां का आईना
गुज़र रहे को बड़े शौक से गुजरने दो
गुज़र गये को ज़रा और भी गुज़रने दो
उसे तो मुड़ के भी तकना है ग़ल्लती हमदम
और उस पे आंसू बहाना भी .खुदकुशी ही है
नदीम सीधा ही चलना बहुत ज़रूरी है
क़दम जब आगे चलें तो निगाहें क्यों पीछे

मुग्नर्रा 4

मैं तो लिखता हूं क़लम का ही रहे सिक्का रवां
मैं तो लिखता हूं ग़ज़ल गोई सदा ज़िन्दा रहे
मैं तो लिखता हूं कि लहराते रहें शेर-ग्रो-स.खुन
मैं तो लिखता हूं रहे सर सब्ज़ ही नखल-ए-हयात
सब्ज़-ग्रो-सेराब रहे खुरूम-ग्रो-शादाब रहे
मैं तो लिखता हूं कि मयख़ाने दुकाने न बनें
मैं तो लिखता हूं क़लम का ही रहे सिक्का रवां
मैं तो लिखता हूं कि तलवार हो टुकड़े टुकड़े
मैं तो लिखता हूँ कि शायर की भी कोई तो सुने
मैं तो लिखता हूं कि हस्ती मेरी ग्राज़ाद रहे
मैं तो लिखता हूँ कि बस्ती मेरी ग्राबाद रहे
ग्रासमानों से भी ऊंची मेरी परवाज़ रहे
बादशाहत हो किसी की तो वो क़ानून की हो
ग्रौर क़ानून जो निकले तो वो शायर के क़लम से
बाक़ी क़ानून तो सब देख चुकी है दुनियां
मैं तो लिखता हूँ कि माहदूद न हो जाये बशर

मैं तो लिखता हूँ कि जन्नत को मिले उसका जवाब
मैं तो लिखता हूं कि तारों को भी महताब करूं
मैं तो लिखता हूँ कि ख़ारों को गुलस्तिां कर दूं

मैं तो लिखता हूँ हवाओं को भी सांस आती रहे
मैं तो लिखता हूं कि अनपढ़ भी इसे पढ़ पायें
मैं तो लिखता हूँ कि सुनसान पड़े लफ्ज़ों को
ज़ोर तूफ़ान का दे दे के उछालूं उन को
फ़लसफ़ी को जो ख्याल आये न हों ख्वाबों में
उनको अलफ़ाज़ का रंगीन नज़ारा दे दूं
मैं तो लिखता हूँ कि खुश ज़ायक़ा क़लम मेरा
ज़ौक़ अपने को ज़ुबां पर न सुखा बैठे कहीं
मैं तो लिखता हूँ मुझे नींद न घेरे आकर
और हंसी ख़्वाब न कर डालें मेरे दिल को शिकार
मैं तो लिखता हूँ कि क़तरे को समन्दर कर दूं
मैं तो लिखता हूँ कि ज़र्रे को भी ख़ुरशीद[1] करूं
मैं तो लिखता हूँ कि बयाबां में बहारें लाऊं
मैं तो लिखता हूँ कि ख़िज़ां का भी मुक़द्दर बदलूं

मैं तो लिखता हूँ तेरा हुस्न मेरा इशक़ बने
मैं तो लिखता हूँ मेरा इशक़ तेरा हुस्न बने
मैं तो लिखता हूँ तेरा हुस्न ग़ज़ल में ढालूं
इशक़ के जितने हैं अन्दाज़ सिखा दूं तुझको

[1] सूरज

●

हुस्न तेरा नज़र आता है मेरा हुस्न-ए-ख़्याल
तेरे रुख़सार पे रक्सां हैं निगाहें मेरी
तेरी नज़रों में नज़ारा है मेरी उलफ़त का
मैं तो लिखता हूँ कि यह मनजर तुझे सारा दे दूं
दूर से मैं भी कभी इसका नज़ारा कर लूं
मैं तो लिखता हूँ ग़ज़ल ज़िन्दा-ऐ-जावैद[1] रहे
मैं तो लिखता हूँ उसे मेरा क़लम याद रहे
मैं तो लिखता हूं ग़ज़ल ता-अबद आबाद रहे
मैं तो लिखता हूँ कि कोई तो मुझे याद रहे
मैं तो लिखता हूँ किसी को मैं सदा याद रहूँ
मैं तो लिखता हूँ सदा कोई मुझे याद रखे
भूलने वाला भी रह रह के मुझे याद करें

1 दफन किया हुआ

BLANK VERSE

लोहड़ी

मौसम-ए- सरमा का यह मेराज है
बाद इसके सर्दियों का जमघटा
हौले हौले टूटने लगता भी है
बर्फ़ में मदफ़ून सूर्य था पड़ा
उसको लोहड़ी ने है छीना क़ब्र से
जान में जान आई है खुर्शीद[4] की
शमस[5] को मिलने लगी है ज़िन्दगी
लोहड़ी का पहला करिश्मा हैं यही
साथ सूर्य के भी ठंडा आदमी
हो गया अंगड़ाई के क़ाबिल है आज
बाद लोहड़ी के यह देखा जाता है
दिन तो बढ़ता है रात घटती है

ज़ुल्मत[5] उड़ती है नूर आता है
रंग आता है रंग जाता है
फूल खिलते हैं फूल हंसते हैं
है यही तो बसन्त का मेला
है यही तो बहार का जलसा
इशक़ उभरता है हुसन खिलता है
लोहड़ी गुलदस्ता है मनाज़िर का[6]
मूंगफ़लियों की भीड़ होती है
रेवड़ी का भी बोला बाल है
गना आता है अपने जौबन पर

चन्ने मक्की भी फूल बनते हैं
चावल अपना चलन दिखाते हैं
कहीं तो मीठे कहीं सलौने हैं
गोभी गाजर भी साथ हैं उनके
लोहड़ी दावत भी है खजूरों की
आग की धूम धाम होती है
शोले उठते है आसमानों तक
लपटें उस की बलन्द होती हैं
आग का ज़शन—ए—आम होता है
नाचते भी हैं लोग गाते भी
शान से हैं दरहशां[7] तिल मूली
लब पे बच्चों के 'मुन्दरी सुन्दर' हो
क्या चमकती हैं क्या धमकती है
यह किसानों की जान होती है
यह किसानों की शान होती है
हिन्द भी मुल्क है किसानों
हिन्द भी है वतन जवानों का
मैंने देखा है लोग ईरानी
जशन, ऐसा मनाया करते हैं
मेहरजान उस का नाम रखते हैं
मेहरगां भी उसी को कहते हैं
हिन्द से लोहड़ी माघी कहता हैं
लोहड़ी में धुन्ध कोहरा जलता है
लोहड़ी श्मशान भी है सर्दी का

(3) शिखर (4) सूर्य (5) अंधेरा (6) नज़ारे (7) रोशन

मुअर्रा

पैसा पैसे को काट देता है

पैसे पैसे की आज क़ीमत है
बे तहाशा ही इसकी ताक़त है
पैसा ही फ़ासले उड़ाता है
वो समन्दर के घूंट भरता है
आसमानों को चीर देता है
ठंडा करता है पैसा सूर्य को
सर्दियां गर्मियों में लाता है
पैसा दुनियां की जान है हमदम
पैसा दुनियां की मौत भी तो है
वो बशर[1] को खरीद सकता है
उसकी गर्दन भी मरोड़ सकता है
उस के सर को उतार सकता है
उस के सर को लगा सकता है
ऐसे ऐसे भी आदमी हैं जो
पैसे पैसे पे जान देते हैं
पैसा मन्दिर ख़रीद लेता है
पैसा मसजिद को जीत लेता है
पैसा मज़हब का सौदा करता है
वो खुदा के मुकाबले पर है

हफ़्त अफलाक[2] उस के नीचे हैं
उनको बल्कि लताड़ देता हैं
पैसा पैसे को काट देता है
पैसा पैसे को ढूंढ़ लेता है
पैसा परदे में छुप के रहता है
वो तो छुप—छुप के भी चमकता है
राम पैसा रहीम पसा है
पैसा क़ादिर[3] करीम पैसा है
एक शैप उस की हद से बाहिर है
वो वफ़ा को नहीं झुका सकता

(1) आदमी (2) सात आसमां (3) .खुदा

मुअर्रा

फूल लिखता हूं ख़ार लिखता हूं

इशक लिखता हूं हुस्न लिखता हूं
.खुल्द[1] लिखता बहिशत लिखता हूं
हिज्र लिखता हूं वस्ल लिखता हूं
यह भी लिखता हूं वो भी लिखता हूं
फूल लिखता हूं .खार लिखता हूं
क्या बताऊं मैं क्या नहीं लिखता
राम लिखता रहीम लिखता हूं
मुझ से मेरा क़लम तो आगे है

(1) जन्नत

मुअर्रा

मुझे तो फ़र्क नहीं पड़ता मैं जो हूं सो हूं

ज़माना बदले न बदले बशर बदलता है
ज़मी फिरे न फिरे आदमी तो फिरता है
फ़लक की बात नहीं आदमी का किस्सा है
और आदमी है कि जिसको समझना मुश्किल है
बहुत से ऐसा ही कहते हैं मैं नहीं कहता
मेरा ख़्याल तो है आदमी बड़ी शय है
इसे समझने की लेकिन किसे ज़रूरत है ?
मुझे बुरा भी कहे कोई तो ख़ुशी उसकी
अगर कहे कोई अच्छा अच्छाई उसकी है
मुझे तो फ़र्क नहीं पड़ता मैं जो हूं सो हूं
मुझे पता है किसी को भी मैं नहीं भाता
निकलता मुझ से है बच बच के मेरा साया भी
इसी लिए तो मुझे सब पसन्द आते हैं

मुअर्रा

हर कोई कवे की लय को तो समझ सकता नहीं

चोंच .कैंची की तरह खोले है चलता जा रहा

चाल शाहाना है उस की और गर्दन मोर की

नाम का कवा है लेकिन उस की अपनी शान है

कायं कायं को बदल देता है जब ज़ंज़ीर में

हार नौ लखा वुही ज़ंजीर लगती है मुझे

कवा मौसीक़ार[1] भी है और नग़मा ख़ान[2] भी

आप ही गीत है और आप ही वो गीतकार

चहचहे बुलबुल के उड़ जाते हैं उस के सामने

बंद हो जाती है गाती .कुमरियों की भी .जुबान

मुर्ग-ए-.खुश[3] इल्हान भा तो ठहर सकता हीं नहीं

ताईरान-ए--खुशगलू[4] भी भाग जाते है नदीम

हर कोई कवे की लय की तो समझ सकता नहीं

1) सुर करने बद वाला 2) गीतकार 3) 4) मीठा गाने वाला पक्षी

हवा मुअर्रा

हवा को यूं न उड़ाओ हवा हसीना है

किसी की चुनि उड़ाये तो फ़िर उसे देखो

किसी के घेसू बिखरे तो फिर नजर डालो

किसी की साड़ी को पंखा करे तो फिर बोलो

तुम्हे पसीने न छूटें तो फिर मुझे कहना

यह हुस्न का ही नहीं इशक़ का भी जलवा है

हवा को यूं न उड़ाओ हवा हसीना है

लूटाती फिरती है जो हुस्न दोनों हाथों से

मेरी निगाह से देखो यह हुस्न—ए—दीगर है

(1) बड़ी खूबसूरती

मुअर्रा नज़्म

किन .ख्यालों में पड़े हो आंख तो खोलो ज़रा

राह से रोड़े हटाने का ज़माना अब नहीं

राह पर रोड़े बिछाये जा रहे हैं आजकल

लौट आया है ज़माना धात पत्थर का ऐ दोस्त

किन .ख्यालों में पड़े हो आंख तो खोलो ज़रा

चेहरे तो बेशक है सूरज के बने, आंखे चुन्धियाती हैं उन को देखकर

लेकिन उन पर कुछ पढ़ा जाता नहीं

लोग तो रखते है आंखे मून्द के

उन की नज़रों से न पढ़ लें आप उन्हें

हां .जुबान उन की मगर चलती है .कैंची की तरह

कत्ल करती जाती है वो अन्धा धुन्ध आये गये

पिस न जाना देखना रोड़े हटाते देखना

क़तग्रात मुक्क़फे

शान-ग्रो--शौकत से बात करते हैं
एक ग्रजमत से बात करते हैं
हम तो इस वास्ते पुराने हैं
क्योंकि उल्फ़त से बात करते हैं

कभी तमाम नहीं होती रोशनी की तलाश
किसी ग्रनोखी किसी प्यारी ज़िन्दगी की तलाश
वह बढ़ती जाती है जो कि ज़मीं की ग्राबादी
लगी हुई है .खुदा .खुद को भी किसी की तलाश

याद है मुझ को कभी मैं भी हुग्रा करता था
तुम हंसा करते थे मैं साथ हंसा करता था
खेलते कूदते कुछ ग्रागे निकल जाते थे
देख के जीता तुम्हें मैं भी जिया करता था

ग्राज भी मैं तो उसी याद से जी लेता हूं
ज़.ख्म नज़रों के भी पलकों से ही सी लेता हूं
ज़हर के घूंट भी दिल खोल के पी लेता हूं
मैं तो ऐसा हू कि हर हाल में जी लेता हूं

मैं जैसे ग़म—ए—दो जहां खा रहा हूँ
मैं खा क्या रहा ग़म को भड़का रहा हू
.ज़ुबां पर है ऐसी मुझे .ख़ुद नदामत
हयात अपनी पर जैसे पछ़ता रहा हूं

दोई हुस्न-—और इश्क़ में कैसो
आओ दोनों को एक कर जायें
हुस्न का इन्तज़ार कौन करे
क्यों न हम इशक़ से संवर जायें

तुझे जब आता है राज़-ए-हयात खोल तो दे
जहां चुने न चुने इनको—मोती रोल तो दे
.ख़ुशी-ओ-ग़म की मिलावट है आदमी की हयात
.ख़ुशी में दर्द की शीरीनियों को घोल तो दे

अब के सर्दी लाई है साथ अपने अन्धा धुन्ध धुन्ध
छोड़िए भी बर्फ़ की को नानी भड़काना है क्या
ठंड की मारी के मारे अपना दम क्यों तोड़िए
जिस पे ओले गिर गये हैं उस को गरमाना है क्या

आग पानी का खेल है दुनियां
काम मिट्टी हवा का उड़ना है
ख़त्म होने में कुछ नहीं आता
फ़ानी दुनिया तो अबदी दुनियां है

फिर किसी से उमीद रखी है
क्या कोई और चीज देखी है ?
या कोई और बात समझी है ?
जो भी सोचा है ग़लती की है

लैला होती तो मजनूं हो जाता
सहर को देख अफ़सूं हो जाता
होती नज़रें नजर सनाश अगर
देखते ही दिगरगूं हो जाता

दिल लगाना मुझे पसन्द नहीं
धोका खाना मुझे पसन्द नहीं
जाने जाने की जिन को रहती है
उनका आना मुझे पसन्द नहीं

दिल किसी से लगा नहीं सकते
सर पे अपने चढ़ा नहीं सकते
अपनी हस्ती पे नाज़ है हम को
अपनी हस्ती मिटा नहीं सकते

नज़ूल-ए-शेर से शब की सिआही जगमगाती है
सितारे टूट कर गिरते हों जैसे चरख़-ए-गरदां से
ख़ुदा का शुक्र है बन्दों के दिल पहलु में पिनहां हैं
वगरना आज ही महशर बपा था क़लब-ए-उरियां से

हुस्न को जाना नहीं और इशक़ को समझा नहीं
इस बलन्दी पर कोई भी आज तक पहुँचा नहीं
मुझ से भी कोई ख़ुदारा कर न बैठे यह सवाल
जानता सब कुछ हूं लेकिन मुंह से कुछ कहता नहीं

इक रोशनी की पतली नाज़ुक लकीर होती
तेरे लिए हिफ़ाज़त का तेज़ा तीर होती
सब कुछ है पास तेरे फिर भी नहीं है कुछ भी
ऐ काश—पास तेरे बस इक ज़मीर होती

लब से दिल का हाल तो क्या होगा
मुझ से ऐसा कमाल क्या होगा
मैं कहूं और चुप रहें नज़रें
मुझ को ऐसा .ख्याल क्या होगा

आज ज़ोरों पे पाना खाना है
खाने पीने का ही ज़माना
.फ़ैज़ तेरे का शुक्रिया साक़ी
अब तो हर घर शराब खाना है

फाड़ते और सीते जायेंगे
मौज से खाते पीते जायेंगे
ज़िन्दगी का यही तो मक़सद है
जीने आये हैं जीते जायेंगे

जिसे में हर दिल के ग़म नहीं रहते
अशक़ .ख्वाबों में भी नहीं बहते
हुस्न जिस इश्क़ में नहीं होता
उसको हम इश्क़ ही नहीं कहते

अपने अपने असूल देखें हैं
अर्ज़ा देखें हैं तूल देखें हैं
तुमने देखें हैं ख़ार फूलों में
हमने ख़ारों में फूल देखें हैं

दिल से दिल किस तरह से मिलते हैं
आने जाने के क्या ज़रिये है
देख ले आ के मेरी नज़रों से
दिल से दिल के हज़ार रस्ते हैं

जब .खुदा ने बना दिया था तुझे
फिर .खुदाई की क्या ज़रूरत थी
इशक़ को वस्ल ने डिबोया है
हिज्र से इश्क़ की तो अज़ामत थी

तू मेरे सामने हो मैं तेरे सामने हूं
ग़ज़लें इधर से चटकें-ग़ज़ले उधर से छटकें
शौले इधर से भड़कें-शौले उधर से लपकें
हो ज़लज़ले इधर से तूफां हों उधर से

व.क्त था जब तेरा दर---ए--दौलत
मुझ पे हर दम खुला ही रहता था
अब तो व.क्त आ गया है मेरे सनम
खटखटाने से भी नहीं खुलता

जो मुझ को याद करता है
उसे भुलूं कभी शायद
मगर जो भूल जाता है
वो मुझ को याद रहता है